[2022] 4 एस. सी. आर 725

जैस्विंडर सिंह (मृत) विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से

बनाम

नवजोत सिंह सिधु और अन्य

(पुनरीक्षण याचिका (सी. आर. एल.) 2018 का सं. 477)

19 मई, 2022

[ए. एम. खानविलकर और संजय किशन कौल, न्यायाधीशगण]

सजा/सजाः

सजा में वृद्धि – रास्ते का अधिकार के विवाद से संबंधित घटना – प्रतिवादी संख्या 1– अभियुक्त ने एक 65 वर्षीय व्यक्ति को मुट्ठी से मारा, जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई – उच्च न्यायालय ने दोषी ठहराया अभियुक्त को धारा 304 भाग II आई. पी. सी.– हालाँकि, अपील में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी के सभी मुट्ठी प्रहारों में से केवल एक उनमें से मृतक के सिर पर उतरा, मृत्यु के कारण के बारे में अनिश्चितता, कि कोई हथियार का उपयोग नहीं किया गया था और न ही पिछली शत्रुता थी, इस प्रकार, प्रतिवादी को मृत्यु का दोषी नहीं ठहराया गया, बल्कि मृतक को स्वैच्छिक रूप से चोट पहुँचाने का दोषी ठहराया गया, जो की धारा 323 आई. पी. सी. के अंतर्गत दंडनीय है और उसे 1000 / – रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई गई। –समीक्षा याचिका–आयोजितः अभियुक्त, 25 वर्षीय अंतर्राष्ट्रीय क्रिकेटर शारीरिक रूप से बेहद स्वस्थ था और उसका हाथ भी एक हथियार हो सकता है–उसने अपनी उम्र से दोगुने से अधिक उम्र के व्यक्ति पर हमला किया और अपने नंगे हाथों से भी पीड़ित के सिर पर गंभीर प्रहार किया– अनपेक्षित परिणाम हानि के लिए अभी भी उसे उचित रूप से जिम्मेदार ठहराया जा सकता है क्योंकि यह था उचित रूप से पूर्वानुमेय–भले ही नुकसान सीधे तौर पर अभिप्रेत न हो, लेकिन यदि व्यक्ति को गंभीर चोट लगी हो या उसकी मृत्यु हो गई हो तो कुछ गंभीर दोष को जोड़ा जाना चाहिए– जबकि सजा देने के दौरान आनुपातिकता के सिद्धांत को ध्यान में रखा जाना चाहिए–असमान रूप से हल्की सजा अपराध के शिकार व्यक्ति को अपमानित और निराश करती है, और आपराधिक न्याय प्रणाली में समाज के विश्वास को कम करती है–अपील का निर्णय लेने के समय तक लंबी अवधि बीत जाने के कारण असमान और अपर्याप्त सजा देने का आधार नहीं हो सकता है–इस प्रकार, एक वर्ष की अवधि के लिए कठोर कारावास की सजा–समीक्षा–आपराधिक न्यायशास्त्र।

पर्याप्त सजा – आनुपातिकता के सिद्धांतों का अधिरोपण – आयोजितः अपराध की गंभीरता और उसके दंड बीच एक उचित अनुपात बनाए रखने की आवश्यकता है। – जबकि असमान रूप से गंभीर सजा पारित नहीं की जानी चाहिए, साथ ही यह अदालतों को अपराध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए अपर्याप्त सजा देने के लिए भी तैयार नहीं करता है, क्योंकि अपर्याप्त सजा बड़े पैमाने पर समाज पर निवारक प्रभाव पैदा करने में विफल रहेगी।

आंशिक रूप से समीक्षा याचिकाओं को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने कहां :

आयोजित: 1.1. आयोजित: सजा के पहलू से ज्यादा कुछ पर नोटिस को बढ़ाने के लिए अनिच्छा है । चोट की प्रकृति का सबूत क्या है इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए यह विस्तार से विश्लेषण किया गया है। यह ध्यान में रखा गया है कि केवल प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा दिए गए नंगे हाथों से एक झटका मारा गया था मृतक के सिर पर। खोज यह है कि मुट्ठी की लड़ाई में,अन्य वार का प्रयास किया गया हो सकता है लेकिन गिर नहीं पाया शरीर के भौतिक भाग पर। पहलू जैसे की पूर्व से दुश्मनी, नंगे हाथों को छोड़कर किसी अन्य प्रकार का हथियार का उपयोगऔर रास्ते के अधिकार को लेकर एकाएक हुए झगड़ा को भी ध्यान में रखा गया। इस प्रकार, समीक्षा के दायरे का विस्तार करने के लिए तर्कआवेदन अस्वीकार कर दिया जाता है। [पैरा 17–18] [735–डी–एफ]

1.2.कुछ भौतिक पहलू जिन पर सजा के बिंदु पर विचार किए जाने की आवश्यकता थी ऐसा प्रतीत होता है कि किसी भी तरह से इस चरण में चूक गई है, जैसे कि प्रतिवादी नंबर 1 की शारीरिक फिटनेस, वह एक अंतरराष्ट्रीय क्रिकेटर था, जो लंबा और अच्छी कदकाठी था और और अपने बल से अवगत था जो उसके हाथ में भी होगा। वही शारीरिक रूप से समान रूप से रखे गए व्यक्ति पर झटका नहीं दिया गया था, लेकिन एक 65 साल का व्यक्ति, उसकी उम्र से दोगुना से अधिक। प्रतिवादी नंबर 1 यह नहीं कह सकता कि उसे झटका का प्रभाव नहीं पता था या इस पहलू पर अनभिज्ञता की दलील दें। ऐसा नहीं है कि किसी को यह याद दिलाना होगा उसके द्वारा किए गए किसी भी झटके से होने वाली चोट का। दी गई परिस्थितियों में, गुस्सा हो सकता है, होश खो सकते हैं लेकिन फिर गुस्से के नुकसान के परिणाम वहन किया जाना चाहिए। वास्तव में, यह न्यायालय कुछ हद तक अपनी सहभागिता प्रतिवादी संख्या 1को भारतीय दंड संहिता की धारा 323के तहत स्वेच्छा से चोट पहुंचाने में स्वीकार करता है। सवाल यह है कि सजा होने पर भी, क्या समय निकालने पर, केवल 1000 की जुर्माना राशि उचित सजा है जब कोई व्यक्ति अपना जिंदगी हार गया हो प्रतिवादी संख्या एक के द्वारा उसके हाथों से दिए गए चोट के कारण। अपने आप में हाथ भी हो सकता है हथियार जहां एक बॉक्सर, एक पहलवान या एक क्रिकेटर या बेहद शारीरिक रूप से फिट व्यक्ति उसे इस्तेमाल करें। यह माना जा सकता है जब वह किसी शारीरिक रूप से मजबूत व्यक्ति के द्वारादिया गया होया फिर किसी बहुत अधिक उम्र वाले व्यक्ति के ऊपर किया गया हो । जहां तक संबंधित चोट लगने की बात है, इस न्यायालय ने एक ही झटके से मृतक के सर पर दिए गए चोट की दलील को स्वीकार किया है। यह महत्व की बात है जो रिकॉर्ड के चेहरे पर एक त्रुटि है और उपचारात्मक कार्रवाई की आवश्यकता है। [पैरा 24] [737–सी–जी]

1.3. असंगत रूप से कठोर सजा नहीं दी जानी चाहिए, लेकिन कोर्ट को यह भी नहीं कहता है कि वह ऐसी सजा दे जो किसी दंड के प्रकृति के मुताबिक अपर्याप्त हो क्योंकि अपर्याप्त सजा निवारक प्रभाव पैदा करने में विफल रहेगी बड़े पैमाने पर समाज के ऊपर। सजा इस तथ्य के कारण नहीं दी जाती है कि यह एक आंख के लिए एक आंख या दांत के लिए एक दांत होना चाहिए, बजाय इसके समाज पर उचित प्रभाव हो; जबकि अनुचित कठोरता की आवश्यकता नहीं है लेकिन अपर्याप्त सजा से पीड़ित हो सकता है बड़े पैमाने पर समुदाय। [पैरा 25] [737–जी–एच; 738–ए–बी]

1.4 अपर्याप्त सजा देने के लिए कोई भी अनुचित सहानुभूति न्याय प्रणाली को अधिक नुकसान पहुंचाएगी और कानून की प्रभावशीलता में जनता के विश्वास को कम करेगी। समाज लंबे समय तक गंभीर खतरों का सामना नहीं कर सकता है और अगर अदालतें घायलों की रक्षा नहीं करती हैं, घायल तब निजी प्रतिशोध का सहारा लेगा और इसलिए, प्रत्येक न्यायालय का कर्तव्य है कि वह अपराध की प्रकृति और जिस तरीके से इसे निष्पादित या किया गया था, उसे ध्यान में

रखते हुए उचित सजा दे। इस प्रकार, किसी अपराध के लिए दी जाने वाली सजा अप्रासंगिक नहीं होनी चाहिए, लेकिन यह उस अत्याचार और क्रूरता के अनुरूप और सुसंगत होनी चाहिए जिसके साथ अपराध किया गया है। [पैरा 26] [738–सी–डी]

1.5 एक अपराध के लिए सजा देने के दर्शन का एक सामाजिक लक्ष्य है कि सजा इस सिद्धांत पर आधारित होनी चाहिए कि आरोपी को यह एहसास होना चाहिए कि उसके द्वारा किए गए अपराध ने न केवल उसके जीवन में एक सेंध लगाई है, बल्कि सामाजिक ताने–बाने में भी एक असंगति पैदा की है। जहां सुधार के अवसर को ध्यान में रखना है, वहीं आनुपातिकता के सिद्धांत को भी समान रूप से ध्यान में रखना होगा। [पैरा 28] [738–एफ]

1.6 जब एक 25 वर्षीय व्यक्ति, जो एक अंतरराष्ट्रीय क्रिकेटर था, अपनी उम्र से दोगुने से अधिक उम्र के व्यक्ति पर हमला करता है और उसे प्रताड़ित करता है, उसके नंगे हाथों से भी पीड़ित के सिर पर एक गंभीर प्रहार, नुकसान का अनपेक्षित परिणाम अभी भी ठीक से होगा, उनके लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है क्योंकि यह उचित रूप से पूर्वानुमेय था। यह कि यह किसी व्यक्ति की मृत्यु का कारण बनेगा, एक और मामला है क्योंकि दोषसिद्धि केवल आई. पी. सी. की धारा 323 के तहत है। उस संदर्भ में यह देखा गया है कि भले ही किसी भी नुकसान का सीधा इरादा न हो, लेकिन यदि व्यक्ति को गंभीर चोट लगती है या उसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो जाती है तो कुछ गंभीर दोष लगाया जाना चाहिए। न्यायालय इस तथ्य से बहुत प्रभावित नहीं था कि घटना को 26 साल बीत चुके थे और कहा कि क्योंकि अपील का निर्णय होने तक एक लंबी अवधि समाप्त हो गई थी, इसलिए यह निर्णय देने का आधार नहीं हो सकता है। [पैरा 32] [740–जी–H; 741–ए–बी]

1.7 एक असमान रूप से हल्की सजा अपराध के पीड़ित को अपमानित करती है और निराश करती है जब अपराधी को दंडित नहीं किया जाता है या अपेक्षाकृत मामूली सजा के साथ छोड़ दिया जाता है क्योंकि प्रणाली घायल की भावनाओं पर कोई ध्यान नहीं देती है। अपराध के शिकार लोगों के अधिकारों के प्रति उदासीनता सामान्य रूप से समाज और विशेष रूप से आपराधिक न्याय प्रणाली में अपराध के शिकार लोगों के विश्वास को तेजी से कम कर रही है। [पैरा 35] [741–ई–एफ]

1.8 यह अदालत इस बारे में ज्यादा कुछ नहीं बता रही है कि जांच शुरू में कैसे आगे बढ़ी, अदालत को कैसे हस्तक्षेप करना पड़ा यह देखने के लिए की रेलीवेंट व्यक्ति के विरुद्ध चार्ज बनाया गया, किस तरह से साक्ष्य लाया गया, या डॉक्टर की हिचकीचाहत क्योंकि सब कुछ यही बता रहा है कि यह केस बिना किसी रीजनेबल डाउट के सिर्फ भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अंतर्गत ही बनता है। सजा के चरण में केवल जुर्माने की सजा देकर और प्रतिवादी को बिना किसी सजा के जाने देकर अनुग्रह दिखाने की आवश्यकता नहीं थी। तत्काल मामला ऐसा नहीं है जहां दो विचार संभव हैं जैसे कि समीक्षा नहीं होनी चाहिए। यह एक ऐसा मामला है जिसमें प्रतिवादी संख्या 1 पर केवल जुर्माना लगाते समय सजा देने के लिए कुछ आवश्यक तथ्यों की अनदेखी की गई प्रतीत होती है और इसलिए, दो संभावित विचारों के बीच चयन करने का कोई सवाल ही नहीं उठता है। इस प्रकार, लगाए गए जुर्माने के अलावा प्रतिवादी संख्या 1 के ऊपर एक वर्ष के कठोर कारावास की अवधि के लिए कारावास की सजा देना उचित माना जाता है।[पैरा 38–40] [742–D–F]

रिचपाल सिंह मीणा बनाम घासी (2014) 8 एससीसी 918: [2014] 9 एससीआर 857; विरसा सिंह बनाम पंजाब राज्य (1958) एससीआर 1495; सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य (2014) 4 एस.

सी. सी. 375: [2013] 9 एससीआर 1000; परविंदर बंसल बनाम राज्य NCT 2020 SCC ऑनलाइन SC 685; मल्लिकार्जुन कोडगली बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य (2019) 2 एससीसी 752: [2018]13 एस. सी. आर. 1; मनोहर सिंह बनाम राजस्थान राज्य (2015) 3 एस. सी. सी. 449; जय कुमार बनाम मध्य प्रदेश राज्य (1999) 5 एससीसी 1: [1999] 3 एससीआर 426; सुमेर सिंह बनाम सूरजभान सिंह (2014) 7 एससीसी 323 [2014] 5 एससीआर 882 ; रवजी वी. राजस्थान राज्य (1996) 2 एससीसी 175: [1995] 6 पूरक एस. सी. आर. 195; कर्नाटक राज्य बनाम कृष्णप्पा (2000) 4 एससीसी 75: [2000] 2 एससीआर 761; श्याम नारायण बनाम राज्य (दिल्ली का राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र) (2013) 7 एस. सी. सी. 77: [2013] 8 एस. सी. आर. 951; रट्टीराम बनाम एम. पी. राज्य (2012) 4 एससीसी 516: [2012] 3 एस. सी. आर. 496; गोपाल सिंह बनाम उत्तराखंड (2013) 7 एससीसी 545 :[2013] 4 एससीआर 104; एलिस्टर एंथनी परेरा बनाम महाराष्ट्र राज्य आकाशवाणी 2012 एससी 3802: [2012] 1 एस. सी. आर. 145; जगजीत सिंह और अन्य बनाम आशीष मिश्रा @मोनू और अन्र 2022 एससीसी ऑन लाइन एससी 453; राजस्थान राज्य बनाम बनवारी लाल और अन्य 8.4.2022 पर निर्णय लिया; सोमन बनाम केरल राज्य (2013) 11 एससीसी 382: [2012] 11 एससीआर 1155–संदर्भित।

पायने वी. टेनेसी 501 यूएस 808 (1991); बूथ बनाम मैरीलैंड 482 यू. एस. 496 (1987); स्नाइडर बनाम मैसाचुसेट्स 291 US (1934)–संदर्भित।

श्री पी. बाबुलु रेड्डी फाउंडेशन व्याख्यान, क्राइम के पीड़ित –द अनसीन साइड डॉ. जस्टिस ए. एस. आनंद, न्यायाधीश, भारत के सर्वोच्च न्यायालय (जैसा कि वे तब थे) (1998) 1 एस. सी. सी. (जर्नल) 3. 28 तारीख सितंबर 1997 को हैदराबाद में वितरित किया गया –संदर्भित।

<u>मामला कानून संदर्भ</u>

2014 9 एससीआर 857	संदर्भित किया गया है	पैरा 12
1958 एससीआर 1495	संदर्भित किया गया है	पैरा 12
[2013] 9 एससीआर 1000	संदर्भित किया गया है	पैरा 21
[2018] 13 एससीआर 1	संदर्भित किया गया है	पैरा 22
(2015) 3 एस. सी. सी. 449	संदर्भित किया गया है	पैरा 23
[1999] 3 एससीआर 426	संदर्भित किया गया है	पैरा 25
[2014] 5 एससीआर 882	संदर्भित किया गया है	पैरा 26
[1995] 6 पूरक। एससीआर 195	संदर्भित किया गया है	पैरा 26
[2000] 2 एससीआर 761	संदर्भित किया गया है	पैरा 27
[2013] 8 एससीआर 951	संदर्भित किया गया है	पैरा 28
[2012] 3 एससीआर 496	संदर्भित किया गया है	पैरा 29

[2013] 4 एससीआर 104	संदर्भित किया गया है	पैरा 29
[2012] 1 एससीआर 145	संदर्भित किया गया है	पैरा 29
[2012] 11 एससीआर 1155	संदर्भित किया गया है	पैरा 31

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय: याचिका की समीक्षा करें (Crl.) No. 477 of 2018 in Crl. A. No. 60 of 2007.

इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांकित 15.05.2018 निर्णय से 2007 की आपराधिक अपील सं. 60 में।

के साथ

समीक्षा याचिका (सी. आर. एल.) no. 2018 का सं. 478। 2007 का ए. No.58

और समीक्षा याचिका (सीआरएल) no. 2018 का सं. 479। 2007 का ए. सं. 59।

सिद्धार्थ लूथरा, वरिष्ठ अधिवक्ता। , सुधीर वालिया, सुश्री निहारिका अहलूवालिया, सुश्री स्नेह कोहली, सुश्री शुभांगनी जैन, सुश्री अंबिका अत्रे, डॉ. अभिषेक अत्रे, सुश्री ज्योति मेंदिरत्ता, अधिवक्ता। याचिकाकर्ता के लिए।

डॉ. अभिषेक मनु सिंघवी, आर. बसंत, वरिष्ठ अधिवक्ता। , मनु शर्मा, सुश्री तरन्नुम चीमा, अमित भंडारी, ए. कार्तिक, गौरव खन्ना, सुश्री रिधिमा मंधार, कार्तिक खन्ना, विजय सिंह, सुश्री स्मृति सुरेश, साकेत कासिभातला, अर्श खान, अक्षय सहाय, अधिवक्ता उत्तरदाता के लिए।

कोर्ट का निर्णय **न्यायाधीश संजय किशन कौल** सुनाया गया।

<u>पृष्ठभूमि:</u>

1. मूल विवाद दिनांक 27.12.1988 की एक एफआईआर से उत्पन्न हुआ है, भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 304/34 के तहत बत्तियाँ वाला चौक ट्रैफिक लाइट पर दोपहर 12:30 बजे के आसपास एक घटना के बारे में श्री जसविंदर सिंह (मुखबिर) द्वारा दी गई सूचना के आधार पर पंजाब के पटियाला जिले के पीएस कोतवाली के उप-निरीक्षक द्वारा 'आईपीसी' के रूप में संदर्भित) दर्ज किया <u>गया</u>। मुखबिर और एक अवतार सिंह (क्रमशः पीडब्लू-3 और पीडब्लू-4) मृतक गुरनाम सिंह के साथ मारुति कार में यात्रा कर रहे थे। जाहिर तौर पर, आरोपी और मृतक के बीच रास्ते के अधिकार को लेकर विवाद पैदा हुआ और प्रतिवादी नंबर 1 (पहला आरोपी) अपने वाहन से बाहर आया, मृतक को अपने वाहन से बाहर निकाला और मुक्कों से वार किया। मुखबिर के अनुसार हस्तक्षेप करने के उसके प्रयास के परिणामस्वरूप दूसरा आरोपी (प्रतिवादी नंबर 2) (एफआईआर में उल्लेखित नहीं) वाहन से बाहर निकला और उसने मुखबिर पर मुक्के से हमला कर दिया। आरोप है कि आरोपियों ने मृतक की कार की चाबियां निकाल लीं और घटनास्थल से भाग

गये. पीडब्लू–3 और पीडब्लू–4 मृतक को रिक्शे में अस्पताल ले गए जहां डॉक्टरों ने घोषणा की कि गुरनाम सिंह मर गया है।

2. डॉ. जतिंदर कुमार सदाना (पीडब्लू–2) द्वारा एक पोस्टमार्टम किया गया, जिन्होंने दर्ज किया कि चोटें प्रकृति में पोस्टमार्टम से पहले की थीं और एक कुंद हथियार के कारण हुईं, हालांकि उन्होंने मौत के कारण पर अपनी राय सुरक्षित रखी क्योंकि पैथोलॉजिस्ट की रिपोर्ट मिलने के बाद ही दिया जाएगा । पैथोलॉजिस्ट की रिपोर्ट दिनांक 09.01.1989 में मृतक के हृदय की स्थिति में बड़ी संख्या में असामान्यताएं देखी गईं और जहां तक मस्तिष्क का संबंध है, किसी भी विकृति पर ध्यान नहीं दिया गया। पैथोलॉजिस्ट की रिपोर्ट के बाद भी पीडब्लू–2 ने गुरनाम सिंह की मौत के कारण के बारे में कोई निश्चित राय नहीं दी. इसके बाद, पीडब्लू–2 ने 11.01.1989 को सिविल सर्जन, पटियाला को पत्र लिखकर अनुरोध किया कि मामले को फोरेंसिक विशेषज्ञ, सरकारी मेडिकल कॉलेज, पटियाला को भेजा जाए, जिसके परिणामस्वरूप छह सदस्यों वाला एक मेडिकल बोर्ड गठित किया गया। इनमें से दो सदस्यों की जांच पीडब्लू–1 और पीडब्लू–2 के रूप में की गई, लेकिन अभियोजन पक्ष द्वारा मांगे जाने पर कोई और स्पष्टीकरण देने की अनिच्छा के साथ पीडब्लू–1 द्वारा एक बहुत ही गूढ़ राय दी गई।

3. प्रतिवादी नंबर 2 के खिलाफ आईपीसी की धारा 304 के तहत 14.07.1989 को दिनांक 06.03.1989 को आरोप पत्र दायर किया गया था , जिसमें प्रतिवादी नंबर 1 को दोषमुक्त कर दिया गया था। मुकदमे के दौरान, सत्र न्यायालय ने आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके बाद 'सीआरपीसी' के रूप में संदर्भित) की धारा 319 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग किया और मुखबिर का बयान दर्ज करने के बाद प्रतिवादी नंबर 1 को तलब किया। गतिरोध परीक्षण। मुखबिर ने दोनों आरोपियों के खिलाफ आईपीसी की धारा 34 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 302/324/323 के तहत अपराध करने के लिए एक निजी शिकायत भी दर्ज की । दोनों मामलों को समेकित किया गया और 20.08.1994 को एफआईआर से उत्पन्न दोनों आरोपियों के खिलाफ धारा 304 भाग I के तहत आरोप तय किए गए। वहीं शिकायत में प्रतिवादी नंबर 1 के खिलाफ आईपीसी की धारा 302 और प्रतिवादी नंबर 2 के खिलाफ आईपीसी की धारा 302/34 के तहत आरोप तय किए गए थे. मुखबिर को चोट पहुंचाने के आरोप में दोनों आरोपियों के खिलाफ आईपीसी की धारा 323/34 के तहत आरोप तय किए गए।

4. ट्रायल कोर्ट ने सुनवाई के बाद दिनांक 22.09.1999 के फैसले द्वारा दोनों आरोपियों को बरी कर दिया। ट्रायल कोर्ट के फैसले के अनुसार, मौत सबडच्यूरल हैमरेज के कारण नहीं हुई थी और मृतक को तनाव के कारण अचानक कार्डियक अरेस्ट हुआ, जिसके कारण वह गिर गया और उसे दो चोटें लगीं, जिससे सबडच्यूरल हैमरेज हो गया। मौत हिंसा के कारण हुई लेकिन यह निश्चित नहीं है कि गुरनाम सिंह की मौत कब हुई थी।

5. राज्य और शिकायतकर्ता दोनों ने अलग–अलग अपीलों के माध्यम से उच्च न्यायालय का रुख किया। उच्च न्यायालय ने दिनांक 01.12.2006 के फैसले के संदर्भ में राय दी कि दोनों आरोपियों के मामलों पर अलग से विचार किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय ने डॉक्टरों, पीडब्लू–1 और पीडब्लू–2 की गवाही के आधार पर प्रतिवादी नंबर 1 को आईपीसी की धारा 304 भाग II के तहत दोषी ठहराया। उनकी गवाही के अनुसार, मृत्यु का कारण हृदय विफलता थी और उन्होंने केवल इतना कहा था कि मृतक की हृदय की स्थिति बहुत कमजोर थी। खोपड़ी के खुलने पर, बाएं पार्श्विका क्षेत्र और मस्तिष्क पर सबडच्यूरल रक्तस्राव मौजूद था। यह रक्तस्राव था जिसके कारण मृतक की मृत्यु हुई, न कि हृदय गति रुकना। जहां तक

प्रतिवादी नंबर 2 का सवाल है, उसे आईपीसी की धारा 304 भाग II के साथ आईपीसी की धारा 34 के साथ-साथ आईपीसी की धारा 323 के तहत दोषी ठहराया गया था।

6. इस न्यायालय के समक्ष दो अभियुक्तों और मुखबिर द्वारा तीन आपराधिक अपीलें दायर की गईं।

7. इस न्यायालय द्वारा उच्च न्यायालय के फैसले का विश्लेषण किया गया, जिसमें यह राय दी गई कि गवाहों की गवाही भरोसेमंद थी। केवल इसलिए कि मुखबिर, अवतार सिंह और मृतक के बीच कोई संबंध था, और अधिक गवाहों से पूछताछ नहीं की गई, इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सकता कि मामला उचित संदेह से परे साबित नहीं हुआ है।

8. पोस्टमार्टम रिपोर्ट की बारीकी से जांच की गई, जिसमें केवल दो बाहरी चोटों का संकेत मिला – एक कनपटी पर और दूसरी मृतक के बाएं घुटने पर, और दोनों ही खरोंचें थीं। डॉक्टरों की राय थी कि दूसरी चोट गिरने का नतीजा हो सकती है और इस प्रकार, यह बहुत कम संभावना है कि कोई व्यक्ति मुक्के मारते समय एक साथ पीड़ित के सिर और घुटनों पर भी निशाना लगाएगा। प्रतिवादी नंबर 1 ने संभवतः एक से अधिक मुक्के मारे, जबकि उनमें से केवल एक ही मृतक के सिर पर लगा और अन्य का निशाना चूक गया। यह अदालत उच्च न्यायालय की इस टिप्पणी से सहमत नहीं थी कि मौत सबडयूरल हेमरेज के कारण हुई थी न कि कार्डियक अरेस्ट के कारण। बताया गया कि गुरनाम सिंह की मौत के कारण के बारे में अनिश्चितता थी और किसी हथियार का इस्तेमाल नहीं किया गया था, न ही दोनों पक्षों के बीच कोई पुरानी दुश्मनी थी और जो हुआ वह तत्काल विवाद का परिणाम था।

9. प्रतिवादी नंबर 2 के खिलाफ मामला साबित नहीं हुआ था और प्रतिवादी नंबर 1 के साथ प्रतिवादी नंबर 2 की उपस्थिति ही सामान्य इरादे के आधार पर दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त नहीं थी। यहां तक कि आईपीसी की धारा 323 के तहत अपराध के लिए भी प्रतिवादी नंबर 2 को दोषी नहीं ठहराया गया।

10. कोर्ट ने माना कि जांच में खामियां थीं लेकिन फिर संदेह के आधार पर लोगों को दोषी नहीं ठहराया जाता. प्रतिवादी नंबर 1 को गुरनाम सिंह की मौत का दोषी नहीं ठहराया गया था, और एकमात्र निष्कर्ष जो स्वीकार्य पाया गया वह यह था कि प्रतिवादी नंबर 1 ने गुरनाम सिंह को स्वैच्छिक चोट पहुंचाई थी जो आईपीसी की धारा 323 के तहत दंडनीय है । यह देखा गया कि घटना के समय प्रतिवादी नंबर 1 एक अंतरराष्ट्रीय क्रिकेटर और एक सेलिब्रिटी था और कई बार मशहूर हस्तियों द्वारा किए गए कानून के उल्लंघन पर आंखें मूंदने का प्रयास किया गया था। सजा के सवाल पर दिनांक 06.12.2006 के आदेश द्वारा अकेले 1,000/- रुपये का जुर्माना लगाया गया था, क्योंकि उस समय घटना 30 वर्ष पुरानी थी, पार्टियों के बीच कोई दुश्मनी नहीं थी और किसी हथियार का इस्तेमाल नहीं किया गया था।

<u>समीक्षा आवेदन का दायरा बढ़ाने पर:</u>

11. शिकायतकर्ता द्वारा एक समीक्षा आवेदन दायर किया गया था जिसमें 11.09.2018 को नोटिस जारी किया गया था जो प्रतिवादी संख्या 1 के लिए सजा के विस्तार के प्रश्न तक सीमित था। मामले में देरी हुई क्योंकि शुरुआत में वकील आरोपी की ओर से पेश नहीं हो सके। वकील में बदलाव और वरिष्ठ वकील में बदलाव हुआ। हालाँकि, जब दलीलों को संबोधित किया गया, तो शिकायतकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री लूथरा ने हमें समग्र रूप से समीक्षा के पहलू के लिए नोटिस को बड़ा करने के लिए मनाने की कोशिश की और सजा के सवाल तक सीमित नहीं किया।

12. उपरोक्त याचिका ***रिचपाल सिंह मीना बनाम घासी***[i] और ***विरसा सिंह बनाम पंजाब राज्य***[ii] में इस न्यायालय की समन्वय पीठों के निर्णय पर विचार न करने के कारण समर्पित की गई थी।

13. ***रिछपाल सिंह मीना***[iii] मामले में, एक प्रस्ताव पेश किया गया था कि ऐसे मामले जहां हत्या हुई थी, लेकिन सजा केवल गंभीर चोट पहुंचाने के लिए है, यहां तक कि आईपीसी की धारा 300 (तीसरी) के अंतर्गत भी आ सकती है और इसलिए, पुनर्विचार की आवश्यकता होगी, इस पहलू पर कई निर्णयों पर भरोसा किया गया। इन निर्णयों के संदर्भ के बाद न्यायशास्त्रीय पहलू पर चर्चा की गई। इस संबंध में, यह प्रस्तुत किया गया कि ऐसे मामले थे जहां किसी व्यक्ति की मृत्यु के बावजूद और उनमें से कुछ में स्वेच्छा से गंभीर चोट पहुंचाने के कृत्य का पता चलने के बावजूद, इस न्यायालय ने धारा 304 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 299 के प्रावधानों पर विचार नहीं किया है। आईपीसी. सबूतों के आधार पर यह निर्धारित करना न्यायालय का काम था कि यदि यह एक गैर इरादतन हत्या है, तो यह आईपीसी की धारा 300 के तहत बताई गई हत्या के बराबर है या नहीं, जैसा कि आईपीसी की धारा 304 के तहत बताई गई है। यदि दोषी है मानव वध साबित नहीं किया जा सकता है, तो यह "नहीं–" की श्रेणी में आएगा गैर इरादतन हत्या"। चोट से संबंधित मामलों में (आईपीसी की धारा 319 से आगे), वे मृत्यु को अंतिम परिणाम नहीं मानते हैं। इसके अलावा सजा के मुद्दे पर भी चर्चा हुई. यह राय दी गई कि न्यायालय को इस सवाल को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए कि हत्या दोषी है या नहीं, बल्कि मामले को केवल आईपीसी की धारा 325 या धारा 326 के तहत दंडनीय स्वेच्छा से गंभीर चोट पहुंचाने के मामले के रूप में मानना चाहिए।

14. ***विरसा सिंह***[iv] मामले में पहले के फैसले में चोट पहुंचाने के इरादे के पहलू पर गौर किया गया था जो प्रकृति के सामान्य क्रम में मौत का कारण बनने के लिए पर्याप्त है। ऐसी स्थिति में, आईपीसी की धारा 300 तीसरी अनावश्यक होगी क्योंकि यह अधिनियम धारा के पहले भाग के अंतर्गत आएगा। हालाँकि, यह भी कहा गया था कि यह पता लगाना होगा कि शारीरिक चोट लगी थी, चोट की प्रकृति स्थापित की जानी चाहिए और क्या कोई महत्वपूर्ण अंग काटा गया था या नहीं। इसके बाद ध्यान वर्तमान में मौजूद शारीरिक चोट पहुंचाने के इरादे पर केंद्रित होना चाहिए।

15. शिकायतकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री लूथरा द्वारा यह भी आग्रह किया गया था कि 34 साल की देरी (सुप्रा) आरोपी को बरी करने का आधार नहीं हो सकती है, जब देरी के लिए शिकायतकर्ता या पीड़ित जिम्मेदार नहीं थे।

16. दूसरी ओर, प्रतिवादी नंबर 1 के विद्वान वरिष्ठ वकील डॉ. सिंघवी ने इस बात पर जोर देने की कोशिश की कि यह घटना रास्ते के अधिकार के विवाद से संबंधित 34 साल पुरानी है। मामला कई चरणों में कई दौर की जांच से गुजरा है और अब प्रतिवादी के खिलाफ आरोप के संदर्भ में मामले की खूबियों का फिर से आकलन करना आपराधिक न्याय प्रणाली की बुनियादी नींव के लिए विध्वंसक होगा।

17. उपरोक्त पहलू का विश्लेषण करने पर, हम नोटिस को सजा के पहलू से अधिक कुछ तक विस्तारित करने के इच्छुक नहीं हैं। चोट की प्रकृति क्या है, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए सबूतों का विस्तार से विश्लेषण किया गया है। यह ध्यान में रखा गया है कि प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा नंगे हाथों से किया गया केवल एक ही झटका मृतक के सिर पर लगा था। निष्कर्ष यह है कि स्पष्ट रूप से मुक्के की लड़ाई में, अन्य वार करने का प्रयास किया गया होगा लेकिन शरीर के भौतिक भाग पर नहीं गिरा। शत्रुता के बाद की कमी, नंगे हाथों के अलावा इस्तेमाल किए गए किसी भी हथियार की कमी और रास्ते के अधिकार पर एक सहज लड़ाई के परिणाम जैसे पहलुओं को भी ध्यान में रखा गया।

18. इस प्रकार, हम समीक्षा आवेदन के दायरे का विस्तार करने के तर्क को स्पष्ट रूप से खारिज करते हैं।

<u>सजा बढ़ाने पर:</u>

19. इसके बाद हम समीक्षा के पहलू पर आते हैं, जिसने हमें नोटिस जारी करने के लिए प्रेरित किया, यानी लगाई गई सजा को माफ करना – 1,000/– रुपये का जुर्माना। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सजा चोट पहुंचाने से संबंधित आईपीसी की धारा 323 के तहत है , जो इस प्रकार है:

> "323. **स्वेच्छा से चोट पहुँचाने के लिए सज़ा.–** जो कोई भी, धारा 334 द्वारा प्रदान किए गए मामले को छोड़कर , स्वेच्छा से चोट पहुँचाता है, उसे एक अवधि के लिए कारावास की सजा दी जाएगी जिसे एक वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है, या जुर्माना जो एक हजार तक बढ़ाया जा सकता है। रुपये, या दोनों के साथ।"

20. आईपीसी की धारा 323 के तहत सजा का प्रावधान एक साल तक की सजा या 1,000 रुपये तक का जुर्माना या दोनों हो सकता है। मौजूदा मामले में सिर्फ जुर्माना लगाया गया है. इस प्रकार, विश्लेषण करने योग्य प्रश्न यह है कि क्या दिए गए तथ्यात्मक परिदृश्य में, किसी भी अवधि के कारावास से दंडित न करके सजा के मुद्दे पर गंभीर त्रुटि की बात कही जा सकती है।

21. शिकायतकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने आग्रह किया कि आईपीसी की धारा 323 के तहत दी गई सजा, सजा के सिद्धांतों के अनुरूप नहीं थी और ***सुनील दत्त शर्मा बनाम राज्य***[v] में सजा पर टिप्पणियां , हालांकि मौत के मामले में थीं। सज़ा, छोटे अपराधों के लिए समान रूप से लागू होगी। यह माना गया कि सजा के प्रश्न पर निर्णय लेने से पहले उत्तेजक और शमन करने वाले दोनों कारकों पर विचार करना आवश्यक था, खासकर तब जब उच्च न्यायालय के फैसले को उन प्रावधानों पर आधारित करने की कोशिश की जाती है जिनके तहत यह आधारित है। यह आग्रह किया गया कि दी गई सज़ा अपराध के अनुपात में होनी चाहिए और इसमें निवारक पहलू को ध्यान में रखा जाना चाहिए। जब चोट/चोट के परिणामस्वरूप मृत्यु हो गई हो तो सजा देने में नरमी नहीं बरती जा सकती है, न ही मुकदमे में देरी को ध्यान में रखा जा सकता है जो शिकायतकर्ताओं के लिए जिम्मेदार नहीं थी। प्रासंगिक समय पर प्रतिवादी नंबर 1 25 साल का एक युवा व्यक्ति था, जो अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट खेल रहा था और शारीरिक रूप से स्वस्थ था। उससे अपेक्षा की जाती है कि वह अपने द्वारा किए जाने वाले किसी भी आघात के प्रभाव को जान सके, खासकर तब जब विपरीत पक्ष का व्यक्ति लगभग 65 वर्ष का हो (अपने पिता की उम्र से अधिक और उससे 40 वर्ष बड़ा हो)। इस प्रकार, इसका आग्रह केवल इसलिए किया गया क्योंकि यह एक स्वत:स्फूर्त घटना थी, जहां किसी हथियार का इस्तेमाल नहीं किया गया, वहां 1,000/– रुपये के जुर्माने की न्यूनतम और हानिरहित सजा देने का आधार नहीं हो सकता।

22. दूसरी ओर, प्रतिवादी नंबर 1 के विद्वान वरिष्ठ वकील ने आग्रह किया कि सजा की मात्रा पर समीक्षा याचिका सुनवाई योग्य नहीं है। ***उन्होंने परविंदर कंसल बनाम एनसीटी राज्य***[vi] और ***मल्लिकार्जुन कोडगली बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य***[vii] में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा करने की मांग की। उनका कहना था कि पीड़ित के अपील करने का अधिकार केवल तीन घटनाओं तक ही सीमित होना चाहिए, यानी, अभियुक्त को बरी करना, कम अपराध के लिए दोषी ठहराना, या अपर्याप्त मुआवज़ा लगाना, लेकिन अपर्याप्त के रूप में सजा की मात्रा पर सवाल उठाने के लिए पीड़ित के लिए अपील का कोई प्रावधान नहीं था। ऐसा अधिकार राज्य के लिए सीआरपीसी की धारा 377 के तहत उपलब्ध था।

23. विद्वान वरिष्ठ वकील ने भी ***मनोहर सिंह बनाम राजस्थान राज्य***[viii] में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए तर्क दिया कि जब घटना की तारीख के बाद लंबा समय हो तो जुर्माना भी बिना किसी कारावास के पूरी तरह से पर्याप्त है।

<u>हमारा दृष्टिकोण:</u>

24. हमने इस मामले पर अपना विचार दे दिया है। हमारे विचार में, कुछ भौतिक पहलू जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता थी, ऐसा प्रतीत होता है कि सजा के चरण में किसी तरह छूट गई है, जैसे कि प्रतिवादी नंबर 1 की शारीरिक फिटनेस क्योंकि वह एक अंतरराष्ट्रीय क्रिकेटर था, जो लंबा और अच्छा था। वह बना हुआ था और उस प्रहार की ताकत से अवगत था जिसे उसका हाथ भी सहन कर सकता था। यह झटका शारीरिक रूप से समान स्थिति वाले किसी व्यक्ति पर नहीं, बल्कि उसकी उम्र से दोगुने से भी अधिक, 65 वर्ष के व्यक्ति पर लगाया गया था। प्रतिवादी नंबर 1 यह नहीं कह सकता कि उसे आघात के प्रभाव का पता नहीं था या वह इस पहलू पर अनभिज्ञता व्यक्त नहीं कर सकता। ऐसा नहीं है कि किसी को उसे यह याद दिलाना पड़े कि उसके द्वारा किये गये प्रहार से उसे कितनी बड़ी चोट लग सकती है। दी गई परिस्थितियों में, हो सकता है कि आपा खो दिया हो, लेकिन फिर आपा खोने के परिणाम भी भुगतने होंगे। वास्तव में, यह न्यायालय कुछ हद तक अंततः प्रतिवादी नंबर 1 को आईपीसी की धारा 323 के तहत साधारण चोट के अपराध के लिए दोषी ठहराने में लिप्त था। सवाल यह है कि क्या सज़ा पर भी, केवल समय बीतने पर 1,000/– रुपये का जुर्माना लगाया जा सकता है, जो एक पर्याप्त सज़ा है, जहां प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा अपने हाथों से किए गए प्रहार की गंभीरता के कारण किसी व्यक्ति की जान चली गई हो। . हाथ अपने आप में एक हथियार भी हो सकता है जहां एक मुक्केबाज, एक पहलवान या एक क्रिकेटर या शारीरिक रूप से बेहद स्वस्थ व्यक्ति ऐसा कर सकता है। इसे ऐसे समझा जा सकता है जहां झटका शारीरिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति या अधिक उम्र के व्यक्ति द्वारा दिया जा सकता है। जहां तक चोट लगने का सवाल है, इस अदालत ने मृतक के सिर पर हाथ से एक ही वार करने की दलील को स्वीकार कर लिया है। हमारे विचार में, यह वह महत्व है जो रिकॉर्ड में स्पष्ट रूप से दिखाई देने वाली त्रुटि है जिसके लिए कुछ सुधारात्मक कार्रवाई की आवश्यकता है।

25. हम अपराध की गंभीरता और सजा के बीच उचित अनुपात बनाए रखने की आवश्यकता पर थोड़ा और विस्तार से विचार करना चाहेंगे। हालाँकि असंगत रूप से कठोर सज़ा नहीं दी जानी चाहिए, साथ ही यह कानून अदालतों को ऐसी सज़ा देने का अधिकार भी नहीं देता है जो स्पष्ट रूप से अपर्याप्त हो, अपराध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, क्योंकि एक अपर्याप्त सज़ा निवारक उत्पन्न करने में विफल होगी बड़े पैमाने पर समाज पर प्रभाव। सज़ाएँ इसलिए नहीं दी जातीं क्योंकि इसका मतलब आँख के बदले आँख या दाँत के बदले दाँत होना है, बल्कि इसका समाज पर उचित प्रभाव पड़ता है; जबकि अनुचित कठोरता की आवश्यकता नहीं है, लेकिन अपर्याप्त सजा से बड़े पैमाने पर समुदाय को परेशानी हो सकती है।[ix]

26. ध्यान में रखने योग्य एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि अपर्याप्त सजा देने की कोई भी अनुचित सहानुभूति न्याय प्रणाली को अधिक नुकसान पहुंचाएगी और कानून की प्रभावकारिता में जनता के विश्वास को कमजोर करेगी। समाज गंभीर धमकियों के तहत लंबे समय तक सहन नहीं कर सकता है और यदि अदालतें घायलों की रक्षा नहीं करती हैं, तो घायल व्यक्ति निजी प्रतिशोध का सहारा लेंगे और इसलिए, अपराध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए उचित सजा देना हर अदालत का कर्तव्य है। और जिस तरीके से इसे निष्पादित या प्रतिबद्ध किया गया था।[x] इस प्रकार, यह देखा गया है कि किसी अपराध के लिए दी जाने वाली सजा अप्रासंगिक नहीं होनी चाहिए, बल्कि यह

उस अत्याचार और क्रूरता के अनुरूप और सुसंगत होनी चाहिए जिसके साथ अपराध हुआ है अंजाम दिया गया.[xi]

27. ***कर्नाटक राज्य बनाम कृष्णप्पा*** [xii]में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने पर्याप्त सजा देने के उद्देश्य पर चर्चा करते हुए पैरा 18 में कहा कि "... समाज की सुरक्षा और अपराधी को रोकना कानून का घोषित उद्देश्य है और उचित सज़ा लगाकर इसे हासिल करना आवश्यक है।"

28. किसी अपराध के लिए सजा देने के दर्शन का एक सामाजिक लक्षय है कि सजा इस सिद्धांत पर आधारित होनी चाहिए कि अभियुक्त को यह एहसास होना चाहिए कि उसके द्वारा किए गए अपराध ने न केवल उसके जीवन में बल्कि सामाजिक ताने–बाने में भी दरार पैदा की है।[xiii] जहां सुधार के अवसर को ध्यान में रखना होगा, वहीं आनुपातिकता के सिद्धांत को भी समान रूप से ध्यान में रखना होगा।

29. समय बीतने के साथ आपराधिक न्यायशास्त्र ने पीड़ित विज्ञान पर जोर दिया है, जो मूल रूप से अपराधी के साथ–साथ पीड़ित के दृष्टिकोण से एक मुकदमे की धारणा है। दोनों को सामाजिक संदर्भ में देखा जाता है और इस प्रकार, पीड़ित के अधिकारों को समान रूप से संरक्षित किया जाना चाहिए।[xiv] ***गोपाल सिंह बनाम उत्तराखंड राज्य*** [xv] में इस न्यायालय की टिप्पणियों पर भरोसा करना उपयोगी होगा कि उचित सजा समाज का सामूहिक रोना है और जबकि सामूहिक रोना को सबसे ऊपर ध्यान में रखना होगा, साथ ही अपराध और सजा के बीच आनुपातिकता के सिद्धांत को पूरी तरह से खारिज नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, उचित दंड का सिद्धांत किसी आपराधिक अपराध के संबंध में सजा का आधार है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि न तो कोई स्ट्रेटजैकेट फॉर्मूला हो सकता है और न ही कोई हल करने योग्य गणितीय सटीकता सिद्धांत । केवल अदालत में निहित विवेक के आधार पर किसी अपराधी के साथ नरमी से पेश आने की अनुमति नहीं दी जा सकती। इसी तरह, ***एलिस्टर एंथोनी परेरा बनाम महाराष्ट्र राज्य***[xvi] में , सजा नीति के दोहरे उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए निवारण और सुधार पर जोर दिया गया था और इस प्रकार, एक दोषी को सजा देने में आनुपातिकता के सिद्धांत को अपराधी में अच्छी तरह से स्थापित माना गया था न्यायशास्र में ।

30. हम ***जगजीत सिंह और अन्य बनाम आशीष मिश्रा उर्फ मोनू और अन्य*** [xvii]मामले में 18.04.2022 को तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिए गए इस न्यायालय के हालिया फैसले पर भी ध्यान दे सकते हैं, यद्यपि, जमानत के मुद्दे पर। इसमें पीड़ित की सुनवाई के अधिकार पर जोर दिया गया। हमारे लिए यह नोट करना प्रासंगिक है कि पीड़ित को वास्तव में अपराध से पीड़ित होने के कारण न्यायिक प्रक्रिया में कोई भागीदारी नहीं थी। अपराध को रोकने और दंडित करने के लिए आपराधिक न्याय व्यवस्था के मौजूदा लोकाचार ने चुपचाप पीड़ित से मुंह मोड़ लिया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि वर्तमान मामले में हर स्तर पर पीड़ित की बात सुनी गई है और वर्तमान आवेदन भी पीड़ित का ही है। निकट और प्रिय लोगों, चाहे अभिभावक हों या कानूनी उत्तराधिकारी, को पीड़ित के रूप में माना जाना आवश्यक है। इस प्रकार, इसे पैरा 23 में देखा गया अंतर्गत:

"23. यह नहीं कहा जा सकता कि संशोधित सीआरपीसी के तहत पीड़ित का अधिकार है । वास्तविक, प्रवर्तनीय हैं और मानव अधिकारों का दूसरा पहलू हैं। इसलिए, पीड़ित के अधिकार को ब्रूटम फुलमेन की तरह प्रतिबंधात्मक रूप से नहीं कहा या समझा नहीं जा सकता है। हम दोहराते हैं कि ये अधिकार पूरी तरह से स्वतंत्र, अतुलनीय हैं, और सीआरपीसी के तहत राज्य के लिए सहायक या सहायक नहीं हैं । इसलिए, कार्यवाही में 'राज्य' की उपस्थिति अपराध के 'पीड़ित' की सुनवाई के समान नहीं है।"

31. ***राजस्थान राज्य बनाम बनवारी लाल और अन्य*** [xviii]शीर्षक वाली आपराधिक अपील संख्या 579/2022 में इसी तरह, इस न्यायालय ने सजा को पहले से ही पूरी की गई अवधि तक कम करने की अदालतों की प्रवृत्ति पर फिर से नाराजगी व्यक्त की है। ***सोमन बनाम केरल राज्य***[xix] में इस न्यायालय के पहले के फैसले का उल्लेख किया गया था, विशेष रूप से पैरा 27, जो इस प्रकार है:

> "27.1. अदालतों को सजा के फैसले विभिन्न अलग-अलग तर्कों पर आधारित करने चाहिए - जिनमें से सबसे प्रमुख आनुपातिकता और निवारण होगा।
>
> 27.2. आपराधिक कार्रवाई के परिणामों का प्रश्न आनुपातिकता और निवारण दोनों दृष्टिकोण से प्रासंगिक हो सकता है।
>
> 27.3. जहां तक आनुपातिकता का सवाल है, सजा अपराध की गंभीरता के अनुरूप होनी चाहिए।
>
> 27.4. अपराध की गंभीरता का आकलन करने के लिए प्रासंगिक कारकों में से एक इसके परिणामस्वरूप होने वाले परिणाम हैं।
>
> 27.5. अनपेक्षित परिणाम/नुकसान के लिए अभी भी उचित रूप से अपराधी को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है यदि उनका यथोचित पूर्वानुमान किया जा सके। शराब के अवैध और भूमिगत निर्माण के मामले में, विषाक्तता की संभावना इतनी अधिक है कि न केवल इसके निर्माता बल्कि वितरक और खुदरा विक्रेता को उपभोक्ता के लिए इसके संभावित जोखिमों का पता होगा। इसलिए, भले ही उपभोक्ता को सीधे तौर पर कोई नुकसान पहुंचाने का इरादा न हो, लेकिन अगर नकली शराब के सेवन के परिणामस्वरूप उपभोक्ता को कोई गंभीर चोट पहुंचती है या उसकी मृत्यु हो जाती है, तो कुछ गंभीर दोष अवश्य जुड़ेगा।"

32. हम ऊपर उद्धृत पैरा 27.5 में टिप्पणियों को वर्तमान मामले के तथ्यों के संदर्भ में कुछ महत्व पाते हैं। इस प्रकार, जब एक 25 वर्षीय व्यक्ति, जो एक अंतरराष्ट्रीय क्रिकेटर था, अपने से दोगुने से अधिक उम्र के व्यक्ति पर हमला करता है और अपने नंगे हाथों से भी उसके (पीड़ित के) सिर पर गंभीर प्रहार करता है, तब भी नुकसान का अनपेक्षित परिणाम होगा उचित रूप से उसके लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है क्योंकि यह उचित रूप से पूर्वाभास योग्य था। यह एक अलग मामला है कि इससे किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाएगी क्योंकि दोषसिद्धि केवल आईपीसी की धारा 323 के तहत होती है। उस संदर्भ में यह देखा गया है कि भले ही किसी नुकसान का सीधे तौर पर इरादा न हो, फिर भी अगर व्यक्ति को गंभीर चोट लगती है या उसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो जाती है, तो कुछ गंभीर दोषी अवश्य जुड़ा होना चाहिए। मामले के तथ्यों और सोमन[xx] के संदर्भ में एक और समानता यह है कि अदालत इस तथ्य से बहुत अधिक प्रभावित नहीं थी कि घटना और (सुप्रा) को 26 साल बीत चुके थे। यह देखा गया कि चूंकि अपील पर निर्णय होने तक एक लंबी अवधि बीत चुकी थी, इसलिए सजा देने का आधार नहीं बनाया जा सकता, जो अनुपातहीन और अपर्याप्त थी।

33. ध्यान देने योग्य कारकों में वर्तमान मामले के तथ्यों में उपयुक्त "पीड़ित की रक्षाहीन और असुरक्षित स्थिति" शामिल है।

34. सजा सुनाते समय मृत्युदंड अपराध के एक मामले में "पीड़ित प्रभाव कथन" के पहलू की जांच करते समय अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट भी ***पायने बनाम टेनेसी***[xxi] में उसी दिशा में आगे बढ़ा

है। अदालत ने ***बूथ बनाम मैरीलैंड***[xxii] के मामले में असहमति वाले फैसले के पहलू पर विचार किया, जिसमें "सजा देने वाले को यह याद दिलाने पर जोर दिया गया था कि जिस तरह हत्यारे को एक व्यक्ति माना जाना चाहिए, उसी तरह पीड़ित भी एक व्यक्ति है जिसकी मृत्यु एक अनोखी क्षति का प्रतिनिधित्व करती है।" समाज और विशेष रूप से उसके परिवार के लिए।" ***स्नाइडर बनाम मैसाचुसेट्स***[xxiii] में न्यायमूर्ति बेंजामिन कार्डोज़ो के शब्द बताते हैं कि "न्याय, हालांकि आरोपी के कारण होता है, लेकिन आरोप लगाने वाले के कारण भी होता है।" निष्पक्षता की अवधारणा को तब तक तनावग्रस्त नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि यह एक फिलामेंट तक सीमित न हो जाए। हमें संतुलन सही रखना है।"

35. इस प्रकार, असंगत रूप से हल्की सजा अपराध के पीड़ित को अपमानित और निराश करती है जब अपराधी को सजा नहीं मिलती है या अपेक्षाकृत मामूली सजा के साथ छोड़ दिया जाता है क्योंकि सिस्टम घायल की भावनाओं पर कोई ध्यान नहीं देता है। अपराध के पीड़ित के अधिकारों के प्रति उदासीनता आम तौर पर समाज और विशेष रूप से अपराध के पीड़ित का आपराधिक न्याय प्रणाली में विश्वास तेजी से कम कर रही है।[xxiv]

36. हमने प्रतिवादी के विद्वान वरिष्ठ वकील के इस तर्क को खारिज करने के लिए उपरोक्त निर्णयों पर ध्यान दिया कि पीड़ित को सजा बढ़ाने के मामले में कोई अधिकार नहीं होना चाहिए।

37. संक्षेप में, सजा और पीड़ित विज्ञान के पहलू निम्नलिखित प्राचीन ज्ञान में परिलक्षित होते हैं:

"यथावयो यथाकालं यथा प्राणं च ब्राह्मणे।"
प्रायश्चितं प्रदातव्यं ब्राह्मणैर्द्ध पाठकैः।
येन शुद्धादर्वप्नोश्चत न च प्राणैश्चवधयुज्यते।
आश्चतिं वा र्हतिं यश्चत् न चैतद् व्रतरा श्चदशेत्।।"

इसका अर्थ है: धर्मशास्त्र के अनुसार न्याय करने वाले व्यक्ति को आयु, समय और शक्ति के अनुसार उचित प्रायश्चित निर्धारित करना चाहिए। पापी, प्रायश्चित ऐसा हो कि उसे अपना जीवन न गँवाना पड़े और फिर भी वह शुद्ध हो जाए। कष्ट उत्पन्न करने वाला प्रायश्चित्त निर्धारित नहीं किया जाना चाहिए।

38. हम इस बारे में ज्यादा कुछ नहीं बता रहे हैं कि जांच शुरू में कैसे आगे बढ़ी, कैसे अदालत को यह देखने के लिए हस्तक्षेप करना पड़ा कि संबंधित लोगों पर आरोप लगाए गए हैं, सबूत पेश करने का तरीका, डॉक्टरों की झिझक, इन सभी पर इस अदालत में विचार किया गया है उचित संदेह से परे मामला आईपीसी की धारा 323 के तहत केवल एक ही हो सकता है। हमारा मानना है कि सज़ा के चरण में केवल जुर्माना लगाकर और प्रतिवादी को बिना सज़ा लगाए जाने देकर उदारता दिखाने की आवश्यकता नहीं थी।

39. वर्तमान मामला ऐसा नहीं है जहां दो दृष्टिकोण संभव हैं, जैसे कि समीक्षा नहीं की जानी चाहिए। यह एक ऐसा मामला है जहां प्रतिवादी नंबर 1 पर केवल जुर्माना लगाते समय सजा के लिए कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों को नजरअंदाज कर दिया गया है और इसलिए, दो संभावित विचारों के बीच चयन करने का कोई सवाल ही नहीं उठता है।

निष्कर्ष:

40. उपरोक्त का परिणाम यह है कि समीक्षा आवेदन/याचिकाएं उपरोक्त सीमा तक स्वीकार की जाती हैं और लगाए गए जुर्माने के अलावा हम प्रतिवादी नंबर 1 को एक वर्ष की कठोर कारावास की सजा देना उचित समझते हैं। पार्टियों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ दिया गया है।

[एएम खानविलकर जे]

[संजय किशन कौल जे]

नई दिल्ली।

19 मई 2022.

समाप्ति नोट

[i] (2014) 8 SCC 918
[ii] 1958 SCR 1495
[iii] (supra)
[iv] (supra)
[v] (2014) 4 SCC 375
[vi] 2020 SCC Online SC 685
[vii] (2019) 2 SCC 752
[viii] (2015) 3 SCC 449
[ix] जय कुमार बनाम मध्य प्रदेश राज्य (1999) 5 SCC 1.
[x] सुमीर सिंह बनाम सूरजभान सिंह (2014) 7 SCC 323.
[xi] रावजी बनाम राजस्थान राज्य (1996) 2 SCC 175.
[xii] (2000) 4 SCC 75
[xiii] श्याम नारायण बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली) (2013) 7 SCC 77.
[xiv] रत्तीराम बनाम राज्य म.प्र. (2012) 4 SCC 516.
[xv] (2013) 7 SCC 545.
[xvi] AIR 2012 SC 3802
[xvii] 2022 SCC Online SC 453
[xviii] Decided on 8.4.2022.
[xix] (2013) 11 SCC 382.
[xx] (supra).
[xxi] 501 US 808 (1991).
[xxii] 482 U.S. 496 (1987).
[xxiii] 291 US 97 (1934).
[xxiv] श्री पी. बाबूलू रेड्डी फाउंडेशन व्याख्यान, अपराध के शिकार – अनदेखा पक्ष, डॉ. न्यायमूर्ति ए.एस. आनंद द्वारा।, न्यायाधीश, भारत का सर्वोच्च न्यायालय, (जैसा कि वह तब थे) (1998) 1 एससीसी (जौर) 3. 28 सितंबर, 1997 को हैदराबाद में दिया गया।.

Translated By

अभिषेक कुमार
न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, पटना सदर